पं.क्र. (04/21/05/207665/19)

अन्तरा शब्दशक्ति
प्रकाशन एवं बहुउद्देशीय संस्था
www.antrashabdshakti.com

शब्द
से संवेदना तक...
लेखन से
परिवर्तन तक...

हिन्दी
हमारी पहचान
हमारी शक्ति

‘समसामयिक प्रश्नों पर आपकी कलम’

(लेख प्रतियोगिता)

विचार...
चिंतन...
संवाद...
और
एक बेहतर
कल की ओर...

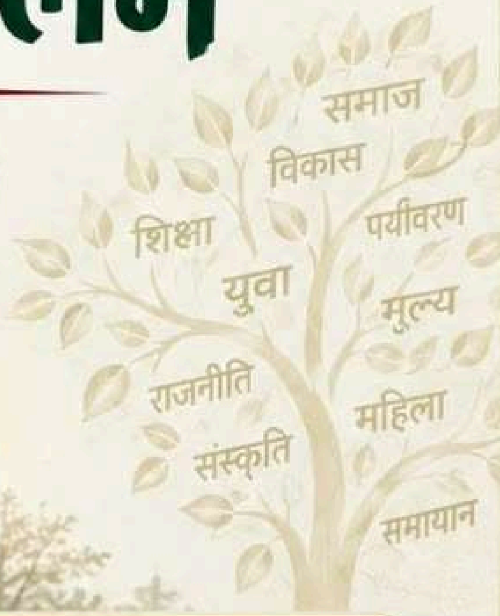

रचनाकार :-
नीलचित्रा व्यास

आयोजक:-
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)

अन्तरा
शब्दशक्ति
प्रकाशन एवं बहुददेशीय संस्था
www.antrashabdshakti.com

कलम की शक्ति, समाज की दिशा

हिन्दी
हमारी पहचान
हमारी शक्ति

शब्द से संवेदन तक...
लेखन से परिवर्तन तक...

संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक : Webcoodee.com
मुख्य कार्यालय : 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331

Antrashabdshaktiprakashan

संपर्क : 9009423393
ईमेल : antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाइट : www.antrashabdshakti.com

वैधानिक सूचना

पुस्तक में प्रकाशित सभी रचनाएँ संबंधित रचनाकारों की मौलिक अभिव्यक्तियाँ हैं। प्रत्येक रचना में व्यक्त विचार, कथ्य एवं अभिमत के लिए संबंधित रचनाकार स्वयं उतरदायी हैं। रचनाओं के चयन एवं प्रकाशन का उद्देश्य साहित्यिक अभिव्यक्ति को मंच प्रदान करना एवं हिन्दी लेखन को प्रोत्साहित करना हैं।

हिन्दी
से ही है
पहचान...

विचार...
संवाद...
समाज...
और एक बैहतर कल...

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

लेख प्रतियोगिता

लेखक/लेखिका - नीलचित्रा व्यास

डिजिटल युग में मानवीय संवेदनाओं का क्षरण : सुविधा के बीच बढ़ता अकेलापन

डिजिटल युग में मानवीय संवेदनाओं का क्षरण : सुविधा के बीच बढ़ता अकेलापन

“हमारे हाथों में दुनिया सिमट आई है,
पर क्या सचमुच दुनिया हमारे पास रह गई है?”

यह प्रश्न आज के मनुष्य के सामने खड़ा सबसे असहज प्रश्न है। विज्ञान ने मनुष्य को ऐसी सुविधाएँ प्रदान की हैं, जिनकी कल्पना कुछ दशक पूर्व तक स्वप्न जैसी लगती थी। एक स्पर्श पर संसार की खबर हमारे सामने होती है, हजारों किलोमीटर दूर बैठे व्यक्ति से क्षणभर में संवाद हो जाता है, कृत्रिम बुद्धिमत्ता हमारे प्रश्नों के उत्तर देने लगी है, चिकित्सा, शिक्षा, व्यापार, परिवहन और संचार के क्षेत्र में तकनीक ने अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं। मनुष्य ने प्रकृति की अनेक सीमाओं को लाँघ लिया है।

किन्तु इसी चमकते हुए डिजिटल संसार के भीतर एक दूसरा संसार भी जन्म ले रहा है—अकेलेपन, संवादहीनता, मानसिक दबाव, तुलना, असुरक्षा और संवेदनाओं के क्षरण का संसार।

आज का मनुष्य पहले से अधिक जुड़ा हुआ दिखाई देता है, लेकिन भीतर से पहले से अधिक अकेला होता जा रहा है। उसके मोबाइल में सैकड़ों संपर्क हैं, सामाजिक माध्यमों पर हजारों परिचित हैं, संदेशों की भरमार है, तस्वीरों पर असंख्य प्रतिक्रियाएँ हैं, परंतु जब मन सचमुच किसी अपने को खोजता है, तब कई बार आसपास केवल मौन मिलता है।

यही मेरे विचार में वर्तमान समय की सबसे बड़ी और विकराल समस्याओं में से एक है—तकनीक का मनुष्य के जीवन पर इतना बढ़ता प्रभाव कि सुविधा धीरे-धीरे संवेदना पर भारी पड़ने लगे।

यह समस्या केवल समाज की नहीं है। यह कहीं न कहीं हम सबकी व्यक्तिगत समस्या है। शायद मेरी भी।

विकास की दौड़ और मनुष्य का पीछे छूटता मन

मनुष्य ने विकास इसलिए किया था कि जीवन सरल हो सके। तकनीक का उद्देश्य भी मूलतः यही था कि समय बचे, श्रम कम हो और मनुष्य के जीवन में सुविधा बढ़े। किंतु आज स्थिति कुछ उलट दिखाई देती है। सुविधाएँ बढ़ीं, लेकिन समय कम हो गया; संपर्क बढ़े, लेकिन संवाद घट गया; सूचना बढ़ी, लेकिन समझ कम होती गई; मनोरंजन बढ़ा, लेकिन मन की शांति कम होती गई।

पहले घरों में शाम का समय परिवार के नाम होता था। लोग दिनभर की थकान के बाद एक-दूसरे के पास बैठते थे। दादी-नानी की कहानियाँ बच्चों के कल्पनालोक का निर्माण करती थीं। पिता के अनुभव जीवन की पाठशाला होते थे। माँ की रसोई केवल भोजन बनाने का स्थान नहीं, बल्कि परिवार के भावनात्मक मिलन का केंद्र होती थी।

आज उसी घर में चार लोग हैं तो संभव है चार अलग-अलग स्क्रीन भी हों। भोजन की थाली सामने है, मगर ध्यान किसी दूसरे संसार में है। पास बैठे व्यक्ति की आँखों में देखने के बजाय हम दूर बैठे व्यक्ति की ऑनलाइन गतिविधि देख रहे हैं।

विडंबना यह है कि हम स्क्रीन से जुड़े हैं और मनुष्यों से कट रहे हैं। तकनीक दोषी नहीं है। दोष हमारे उस असंतुलन का है, जिसमें साधन धीरे-धीरे साध्य बन गया है। मोबाइल हमारे लिए होना चाहिए था, लेकिन कई बार हम मोबाइल के लिए जीने लगे हैं।

आभासी निकटता और वास्तविक दूरी

सोशल मीडिया ने संवाद को आसान बनाया। किसी मित्र का जन्मदिन याद रखने के लिए कैलेंडर की आवश्यकता नहीं रही। दूर रह रहे परिजन की तस्वीर क्षणभर में देखी जा सकती है। विदेश में रहने वाला बेटा माँ से वीडियो कॉल पर बात कर सकता है। किसी आपदा की सूचना तत्काल हजारों लोगों तक पहुँच सकती है। सामाजिक जागरूकता के अभियानों को व्यापक मंच मिल सकता है।

इसलिए डिजिटल माध्यमों के सकारात्मक पक्ष से इनकार नहीं किया जा सकता।
समस्या तब उत्पन्न होती है जब आभासी संबंध वास्तविक संबंधों का विकल्प बनने लगते हैं। हम किसी की तस्वीर देखकर समझ लेते हैं कि हमें उसके जीवन का पता है। किसी की मुस्कुराती हुई पोस्ट देखकर मान लेते हैं कि वह सुखी है। किसी के उपलब्धि-संदेश देखकर हम उसके संघर्ष का अनुमान लगा लेते हैं।
परंतु स्क्रीन केवल दृश्य दिखाती है, जीवन नहीं। सोशल मीडिया पर दिखाई देने वाली मुस्कान के पीछे छिपे आँसू कैमरे में नहीं आते। सफलता की तस्वीर के पीछे की असफलताएँ दिखाई नहीं देतीं। सजे हुए घर के पीछे का तनाव दिखाई नहीं देता। उत्सव की तस्वीरों के पीछे छिपी थकान दिखाई नहीं देती।
हम दूसरों के जीवन का संपादित संस्करण देखते हैं और फिर अपने जीवन की अनसंपादित वास्तविकता से उसकी तुलना करने लगते हैं। यहीं से जन्म लेती है—हीनता, असंतोष और मानसिक बेचैनी।

तुलना : आधुनिक मनुष्य की अदृश्य बीमारी

आज की पीढ़ी की सबसे बड़ी मानसिक चुनौतियों में से एक निरंतर तुलना है।
किसी ने नया घर खरीदा—हम अपने घर को छोटा समझने लगे।
किसी ने विदेश यात्रा की—हमें अपनी यात्रा साधारण लगने लगी।
किसी ने पुरस्कार जीता—हमें अपनी उपलब्धि छोटी लगने लगी।
किसी ने व्यवसाय शुरू किया—हमें लगता है कि हम पीछे रह गए।
किसी ने सुंदर तस्वीर डाली—हमें अपना चेहरा कम आकर्षक लगने लगा।
किसी ने कुछ नया सीखा—हमें लगता है कि हम कुछ नहीं कर रहे। इस तुलना की कोई अंतिम सीमा नहीं है, क्योंकि डिजिटल संसार में हमेशा कोई न कोई हमसे आगे दिखाई देगा। मनुष्य ने पहले अपने पड़ोसी से तुलना की थी; अब वह संसार के लाखों लोगों से तुलना कर रहा है। यह तुलना व्यक्ति को भीतर से खोखला करती है। वह अपनी यात्रा भूलकर दूसरों की मंजिल देखने लगता है। जब जीवन प्रतियोगिता बन जाता है, तब संतोष सबसे पहले मरता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का युग और मानवीय बुद्धि का प्रश्न

हम ऐसे समय में प्रवेश कर चुके हैं जहाँ कृत्रिम बुद्धिमत्ता अर्थात् Artificial Intelligence हमारे अनेक कार्यों को सरल बना रही है। लेखन, अनुवाद, चित्र निर्माण, शोध, शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यापार और तकनीकी क्षेत्रों में इसका उपयोग तेजी से बढ़ रहा है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता स्वयं में न तो वरदान मात्र है और न अभिशाप मात्र। उसका प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि मनुष्य उसका उपयोग किस उद्देश्य और किस विवेक से करता है।

यदि AI मनुष्य के समय को बचाकर उसे अधिक सृजनशील बनाती है, तो यह स्वागत योग्य है। यदि वह कठिन कार्यों को सरल बनाकर शिक्षा और ज्ञान की पहुँच बढ़ाती है, तो यह मानव प्रगति की दिशा में महत्वपूर्ण साधन है।

लेकिन प्रश्न यह है कि कहीं हम सुविधा के बदले अपनी सोचने की क्षमता तो नहीं छोड़ रहे?

यदि विद्यार्थी उत्तर खोजने से पहले प्रश्न करना छोड़ दे, लेखक अनुभव करने से पहले मशीन से लिखवाने लगे, मनुष्य निर्णय लेने से पहले हर बात के लिए तकनीक पर निर्भर होने लगे, तो समस्या तकनीक में नहीं, मानवीय विवेक के कमजोर पड़ने में होगी।

मशीन जानकारी दे सकती है, लेकिन जीवन का अर्थ मनुष्य को स्वयं समझना होगा।

मशीन शब्दों को व्यवस्थित कर सकती है, लेकिन अनुभूति का ताप मनुष्य के भीतर से आता है।

मशीन कविता लिख सकती है, किंतु कविता को जन्म देने वाला दर्द, प्रेम, प्रतीक्षा, स्मृति और अनुभव मनुष्य के जीवन से आते हैं। इसलिए भविष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता केवल तकनीकी दक्षता नहीं, बल्कि तकनीकी दक्षता के साथ मानवीय संवेदना होगी।

शिक्षा : ज्ञान की जगह केवल सूचना न बन जाए

तकनीक ने शिक्षा को भी बदल दिया है। ऑनलाइन कक्षाएँ, डिजिटल पुस्तकालय, ई-पुस्तकें, शैक्षणिक वीडियो और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित अध्ययन-साधनों ने ज्ञान की पहुँच को विस्तृत किया है।

फिर भी शिक्षा का उद्देश्य केवल सूचना प्राप्त करना नहीं है।
शिक्षा वह है जो व्यक्ति को प्रश्न करना सिखाए, विवेक दे, सही और गलत के बीच अंतर समझाए, दूसरों के दुःख को महसूस करने की क्षमता दे और उसे जिम्मेदार नागरिक बनाए।
यदि विद्यार्थी हजारों तथ्यों को याद कर ले, लेकिन अपने आसपास पीड़ित व्यक्ति के प्रति संवेदनहीन बना रहे, तो उसकी शिक्षा अधूरी है।
यदि वह परीक्षा में उत्कृष्ट अंक प्राप्त करे, लेकिन माता-पिता से संवाद करना भूल जाए, तो जीवन की परीक्षा में कुछ कमी रह गई है। हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जो मस्तिष्क को ज्ञान और हृदय को संवेदना दे।

परिवार : एक ही छत के नीचे अलग-अलग संसार

परिवार भारतीय संस्कृति की आत्मा रहा है। संयुक्त परिवारों की परंपरा ने मनुष्य को साथ रहने, बाँटने, सहने और समझने की शिक्षा दी।
आज परिस्थितियाँ बदली हैं। परिवार छोटे हुए हैं, रोजगार के लिए लोग दूर-दूर रहने लगे हैं और जीवन की गति तेज हुई है। यह परिवर्तन अपने आप में गलत नहीं है। समय के साथ सामाजिक संरचनाएँ बदलती हैं।
लेकिन समस्या तब आती है जब परिवार में भौतिक निकटता होते हुए भी भावनात्मक दूरी बढ़ जाती है। एक बच्चा माता-पिता के साथ एक कमरे में बैठा है, मगर उसका संसार स्क्रीन पर है।
माता-पिता बच्चे की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए मोबाइल देखते हैं, पर उसके मन को समझने के लिए समय नहीं निकाल पाते। पति-पत्नी साथ रहते हैं, लेकिन दिनभर की व्यस्तता के कारण मन की बात करने का अवसर नहीं मिलता। बुजुर्ग घर में होते हैं, मगर उनकी कहानियाँ सुनने वाला कोई नहीं।
यह कैसी विडंबना है कि जिस तकनीक ने हमें दूर बैठे व्यक्ति से जोड़ दिया, उसी तकनीक ने कभी-कभी पास बैठे व्यक्ति से हमारा संवाद छीन लिया।

स्त्री और डिजिटल संसार

डिजिटल माध्यमों ने महिलाओं के लिए अनेक नए अवसर खोले हैं। शिक्षा, रोजगार, उद्यमिता, लेखन, कला और सामाजिक जागरूकता के क्षेत्र में महिलाएँ अपनी प्रतिभा को व्यापक मंच दे पा रही हैं।

घर की चारदीवारी तक सीमित रहने वाली प्रतिभा अब विश्वस्तरीय मंच तक पहुँच सकती है। लेकिन इसके साथ नई चुनौतियाँ भी आई हैं। महिलाओं पर सामाजिक माध्यमों के माध्यम से सौंदर्य, जीवनशैली, सफलता और पारिवारिक भूमिकाओं के अनेक अवास्तविक मानक थोपे जा रहे हैं। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे हर भूमिका में पूर्ण हों—एक आदर्श बेटी, पत्नी, माँ, बहू, कर्मचारी, उद्यमी और सामाजिक रूप से सक्रिय व्यक्ति। जब वास्तविक जीवन इन आदर्श छवियों से मेल नहीं खाता, तब भीतर अपराधबोध जन्म लेता है। हमें समझना होगा कि किसी महिला का जीवन सोशल मीडिया की तस्वीर नहीं है। उसके संघर्ष वास्तविक हैं। उसकी थकान वास्तविक है। उसके सपने वास्तविक हैं। उसकी असफलताएँ भी उतनी ही वास्तविक हैं जितनी उसकी उपलब्धियाँ। महिला को डिजिटल मंच चाहिए, लेकिन उससे भी अधिक उसे ऐसा समाज चाहिए जहाँ उसकी वास्तविकता को स्वीकार किया जाए।

बच्चों का बचपन और स्क्रीन की गिरफ्त

वर्तमान समय की सबसे गंभीर चिंताओं में बच्चों का बदलता बचपन भी है। बचपन कभी मिट्टी में खेलता था, पेड़ों पर चढ़ता था, बारिश में भीगता था, पतंग उड़ाता था, दादी की कहानी सुनता था, कंचे खेलता था और गलियों में मित्र बनाता था। आज बहुत-से बच्चों का खेल मोबाइल स्क्रीन पर शुरू होकर वहीं समाप्त हो जाता है।

यह कहना उचित नहीं होगा कि हर डिजिटल उपयोग हानिकारक है। डिजिटल माध्यम शिक्षा और रचनात्मकता के लिए अत्यंत उपयोगी हो सकते हैं। समस्या तब होती है जब स्क्रीन खेल का विकल्प, पुस्तक का विकल्प, बातचीत का विकल्प और प्रकृति का विकल्प बन जाती है। बच्चे को केवल उपकरण नहीं चाहिए; उसे समय चाहिए। उसे केवल ऐप नहीं चाहिए; उसे आलिंगन चाहिए। उसे केवल मनोरंजन नहीं चाहिए; उसे संवाद चाहिए।

उसे केवल डिजिटल कहानी नहीं चाहिए; उसे दादी की आवाज में सुनाई गई कहानी भी चाहिए।
बचपन यदि स्क्रीन में कैद हो गया तो आने वाली पीढ़ी के पास तकनीकी दक्षता तो होगी, लेकिन क्या उसके पास स्मृतियों की वही गर्माहट होगी?
यह प्रश्न हमें आज ही पूछना होगा।

बुजुर्गों का अकेलापन : विकास की कीमत?

तकनीक की चर्चा करते समय हम युवा पीढ़ी की बात अधिक करते हैं, लेकिन डिजिटल विभाजन का एक बड़ा प्रभाव बुजुर्गों पर भी पड़ता है।
आज अनेक बुजुर्गों के बच्चे रोजगार, शिक्षा या बेहतर अवसरों के कारण दूर रहते हैं। वीडियो कॉल ने दूरी कम करने की कोशिश की है, लेकिन स्क्रीन स्पर्श का विकल्प नहीं बन सकती।
माँ की आँखें बेटे को देख सकती हैं, पर उसके सिर पर हाथ नहीं रख सकतीं। पिता आवाज सुन सकते हैं, पर बेटे के कंधे पर हाथ नहीं रख सकते।
दादा पोते को स्क्रीन पर देख सकते हैं, लेकिन उसके साथ आँगन में बैठकर खेल नहीं सकते। इसलिए तकनीक दूरी कम कर सकती है, मगर अपनापन स्वयं पैदा नहीं कर सकती।
बुजुर्गों के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता केवल सुविधा नहीं, सम्मान और सहभागिता है। उनकी बातें सुनना भी सेवा है। उनके पुराने अनुभवों को महत्व देना भी संस्कृति की रक्षा है। उनके साथ कुछ समय बैठना भी आधुनिक जीवन में एक प्रकार का मानवीय प्रतिरोध है।

मानसिक स्वास्थ्य और मौन का बढ़ता बोझ

आज लोग पहले से अधिक बोलते दिखाई देते हैं, लेकिन अपनी वास्तविक पीड़ा कम व्यक्त करते हैं।
सोशल मीडिया पर हर कोई प्रसन्न दिखाई देता है। कोई अपने दुःख की पूरी तस्वीर साझा नहीं करना चाहता। परिणाम यह होता है कि व्यक्ति अपने भीतर के संघर्ष को अकेले ढोता रहता है।

उसे लगता है कि बाकी सब सुखी हैं और केवल वही परेशान है।
यहीं से अकेलापन गहरा होता है।
मानसिक संघर्ष को कमजोरी मानना भी एक सामाजिक समस्या है। हमें ऐसी संस्कृति विकसित करनी होगी जहाँ व्यक्ति बिना भय के कह सके—"मैं परेशान हूँ", "मुझे सहायता चाहिए", "मैं थक गया हूँ", "मुझे किसी से बात करनी है।"
किसी व्यक्ति को समाधान देने से पहले उसे सुनना आवश्यक है।
हर समस्या का उत्तर सलाह नहीं होता।
कई बार मनुष्य को केवल एक ऐसा व्यक्ति चाहिए जो उसके पास बैठकर कहे—
"तुम अकेले नहीं हो, मैं तुम्हारे साथ हूँ।"
शायद आधुनिक जीवन की सबसे बड़ी कमी यही वाक्य बनता जा रहा है।

समय की कमी या प्राथमिकताओं की कमी?

हम अक्सर कहते हैं—"समय नहीं है।" लेकिन क्या वास्तव में समय नहीं है?
हम घंटों मोबाइल पर रह सकते हैं। अनेक वीडियो देख सकते हैं। सामाजिक माध्यमों पर अनगिनत पोस्ट पढ़ सकते हैं। मनोरंजन के लिए लंबा समय निकाल सकते हैं।
फिर माता-पिता से दस मिनट बात करने के लिए समय क्यों नहीं? बच्चे के साथ आधा घंटा खेलने के लिए समय क्यों नहीं? किसी मित्र की परेशानी सुनने के लिए समय क्यों नहीं? अपने मन को समझने के लिए समय क्यों नहीं?
शायद समस्या समय की कमी से अधिक प्राथमिकताओं की कमी है।
जिसे हम महत्वपूर्ण मानते हैं, उसके लिए समय निकालते हैं।
यदि रिश्ते हमारी प्राथमिकता होंगे, तो उनके लिए समय होगा।
यदि स्वास्थ्य प्राथमिकता होगा, तो उसके लिए समय होगा।
यदि साहित्य और आत्मचिंतन प्राथमिकता होंगे, तो पुस्तक के लिए समय होगा।
यदि प्रकृति प्राथमिकता होगी, तो खुले आकाश के नीचे बैठने के लिए समय होगा।
इसलिए आधुनिक मनुष्य को घड़ी बदलने से पहले अपनी प्राथमिकताएँ बदलनी होंगी।

समाधान तकनीक छोड़ना नहीं, संतुलन सीखना है

इस समस्या का समाधान यह नहीं है कि हम तकनीक से दूर भाग जाएँ। ऐसा करना न व्यावहारिक है, न आवश्यक।

हमें तकनीक छोड़नी नहीं, तकनीक का स्वामी बनना है, दास नहीं।

इसके लिए कुछ छोटे लेकिन प्रभावी कदम उठाए जा सकते हैं।

परिवार में प्रतिदिन कुछ समय ऐसा हो जब सभी लोग मोबाइल दूर रखकर एक-दूसरे से बात करें।

भोजन के समय स्क्रीन से दूरी बनाई जाए।

बच्चों को डिजिटल उपकरण देने के साथ-साथ खेल, पुस्तक, संगीत, कला और प्रकृति से जोड़ा जाए।

सोशल मीडिया पर दिखाई देने वाले जीवन को वास्तविक जीवन का मानक न बनाया जाए।

डिजिटल मित्रता के साथ वास्तविक मित्रता को भी महत्व दिया जाए।

बुजुर्गों के साथ नियमित संवाद किया जाए।

तकनीक का उपयोग सीखने, सृजन और उत्पादकता के लिए अधिक तथा निरर्थक उपभोग के लिए कम किया जाए।

सबसे महत्वपूर्ण—अपने मन की आवाज सुनने के लिए प्रतिदिन कुछ समय स्वयं को दिया जाए।

साहित्य : संवेदना बचाने का एक रास्ता

मेरा मानना है कि इस संकट से बाहर निकलने में साहित्य महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

साहित्य मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है।

जब हम किसी कविता में किसी माँ की पीड़ा पढ़ते हैं, तो केवल शब्द नहीं पढ़ते—हम उसकी अनुभूति से जुड़ते हैं।

जब कहानी में किसी किसान का संघर्ष पढ़ते हैं, तो खेतों की मिट्टी हमारे भीतर उतरती है।

जब किसी स्त्री की व्यथा पढ़ते हैं, तो हम उसके मौन को सुनना सीखते हैं।
जब किसी सैनिक की गाथा पढ़ते हैं, तो राष्ट्र के प्रति कर्तव्य का भाव जागता है।
साहित्य हमें यह याद दिलाता है कि मनुष्य केवल डेटा नहीं है, केवल प्रोफाइल नहीं है, केवल उपयोगकर्ता नहीं है।
वह भावनाओं, स्मृतियों, सपनों और संघर्षों से बना एक जीवंत अस्तित्व है।
इसलिए आज जब तकनीक हमारे जीवन में बढ़ रही है, तब साहित्य की आवश्यकता भी उतनी ही बढ़ रही है।
तकनीक हमें तेज बना सकती है, साहित्य हमें संवेदनशील बनाए रख सकता है।

प्रकृति से कटता मनुष्य

डिजिटल जीवन की एक और बड़ी समस्या प्रकृति से दूरी है।
हम मौसम का हाल मोबाइल में देखते हैं, लेकिन आकाश की ओर देखना भूल जाते हैं।
फूलों की तस्वीरें देखते हैं, मगर फूलों की खुशबू महसूस करने का समय नहीं निकालते।
पक्षियों की आवाज रिकॉर्डिंग में सुनते हैं, लेकिन अपने घर की मुंडेर पर बैठे पक्षी को देखने का धैर्य नहीं रखते।
बारिश को कैमरे में कैद करते हैं, मगर उसकी मिट्टी की सोंधी गंध में कुछ क्षण खोना भूल जाते हैं।
प्रकृति मनुष्य की सबसे पुरानी पाठशाला है।
वह हमें धैर्य सिखाती है।
पेड़ बताते हैं कि जड़ें दिखाई न दें, फिर भी जीवन को संभालती हैं।
नदी सिखाती है कि चलते रहना ही अस्तित्व है।
ऋतुएँ बताती हैं कि परिवर्तन जीवन का नियम है।
यदि मनुष्य प्रकृति से पूरी तरह कट गया, तो वह अपने ही अस्तित्व से दूर हो जाएगा।
इसलिए डिजिटल डिटॉक्स के साथ हमें प्रकृति से पुनः संवाद भी स्थापित करना होगा।

क्या हम सचमुच स्वतंत्र हैं?

एक समय मनुष्य बाहरी बंधनों से स्वतंत्र होने का संघर्ष करता था। आज हमारे सामने बंधन का एक नया रूप है—आंतरिक निर्भरता।

मोबाइल की घंटी बजते ही हाथ स्वतः जेब की ओर जाता है।

सूचना आने पर तुरंत देखने की बेचैनी होती है।

कुछ मिनट फोन न मिले तो असहजता होने लगती है।

सोने से पहले फोन, उठते ही फोन, खाली समय में फोन, यात्रा में फोन, भोजन के समय फोन।

प्रश्न यह नहीं कि हम मोबाइल का उपयोग कितने घंटे करते हैं।

प्रश्न यह है कि क्या हम आवश्यकता पड़ने पर उसे दूर रख सकते हैं?

यदि उत्तर नहीं है, तो हमें सुविधा और निर्भरता के बीच की रेखा पहचाननी होगी।

स्वतंत्रता का अर्थ केवल बाहरी बंधनों से मुक्ति नहीं; अपनी आदतों पर नियंत्रण भी स्वतंत्रता है।

व्यक्तिगत स्तर पर मेरी अनुभूति

इस समस्या को केवल सामाजिक विषय मानकर मैं इससे स्वयं को अलग नहीं कर सकती। हम सभी इस परिवर्तन का हिस्सा हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि दिनभर अनेक लोगों से संपर्क बना रहता है, लेकिन रात को मन के भीतर एक अजीब-सी रिक्तता महसूस होती है। कई संदेशों का उत्तर दिया जाता है, अनेक कार्य पूरे किए जाते हैं, अनेक सूचनाएँ पढ़ी जाती हैं, लेकिन स्वयं से बात करने का समय नहीं मिलता।

कभी किसी प्रिय व्यक्ति के पास बैठकर भी मन किसी दूसरे कार्य में उलझा रहता है।

कभी बच्चे की बात सुनते हुए हाथ मोबाइल पर चला जाता है। कभी परिवार के साथ समय होते हुए भी कैमरा उस क्षण को दर्ज करने में इतना व्यस्त हो जाता है कि हम स्वयं उस क्षण को जीना भूल जाते हैं। तब लगता है—क्या हम जीवन को जी रहे हैं या केवल उसका दस्तावेज बना रहे हैं? क्या हम स्मृतियाँ बना रहे हैं या केवल तस्वीरें? क्या हम रिश्ते निभा रहे हैं या केवल उनकी ऑनलाइन उपस्थिति बनाए हुए हैं? इन प्रश्नों के उत्तर हमेशा सुखद नहीं होते। इसीलिए यह समस्या मेरे लिए भी केवल सामाजिक विश्लेषण नहीं, बल्कि आत्ममंथन का विषय है।

हमें किस भविष्य की ओर जाना है?

भविष्य तकनीक से रहित नहीं होगा। बल्कि आने वाले वर्षों में तकनीक हमारे जीवन में और गहराई से प्रवेश करेगी।
कृत्रिम बुद्धिमत्ता अधिक सक्षम होगी।
रोबोट अधिक कार्य करेंगे।
डिजिटल शिक्षा और विस्तृत होगी।
आभासी संसार अधिक वास्तविक दिखाई देगा।
लेकिन इस सबके बीच सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यही रहेगा—
क्या मनुष्य मनुष्य बना रहेगा?
क्या वह अपने माता-पिता के साथ बैठकर बात करेगा?
क्या वह अपने बच्चों की आँखों में देखकर उनकी चिंता समझेगा?
क्या वह मित्र की पीड़ा को केवल “टेक केयर” लिखकर समाप्त नहीं करेगा, बल्कि उसके पास जाकर बैठेगा?nक्या वह प्रकृति को केवल वॉलपेपर में नहीं, वास्तविक जीवन में भी देखेगा?
क्या वह अपनी सफलता को लाइक्स की संख्या से नहीं, जीवन की सार्थकता से मापेगा? यदि हम इन प्रश्नों के उत्तर बचा सके, तो तकनीक हमारे लिए वरदान बनेगी।
यदि नहीं, तो सुविधा की चमक के बीच संवेदनाओं का अंधकार गहरा सकता है।

निष्कर्ष : मनुष्य को मशीन नहीं, मनुष्य ही बचाएगा

वर्तमान समय की सबसे बड़ी समस्या केवल तकनीकी विकास नहीं है। समस्या तब पैदा होती है जब तकनीक के विकास की गति मानवीय संवेदना के विकास से अधिक हो जाती है।
हमें तेज इंटरनेट के साथ तेज संवेदना नहीं, गहरी संवेदना चाहिए।
हमें अधिक संपर्कों के साथ अधिक आत्मीयता चाहिए।
हमें अधिक सूचना के साथ अधिक विवेक चाहिए।

हमें कृत्रिम बुद्धिमत्ता के साथ मानवीय बुद्धिमत्ता और मानवीय करुणा भी चाहिए।
हमें ऐसी प्रगति नहीं चाहिए जिसमें ऊँची इमारतें तो हों, पर उनमें रहने वाले लोग एक-दूसरे के लिए अजनबी हो जाएँ।
हमें ऐसा भविष्य नहीं चाहिए जिसमें बच्चे तकनीक के सारे उपकरण जानते हों, लेकिन दादा-दादी की कहानी सुनने का धैर्य न रखते हों।
हमें ऐसा समाज नहीं चाहिए जहाँ व्यक्ति हजारों लोगों के बीच भी अपने दुःख को कहने के लिए किसी एक आत्मीय चेहरे को तरसता रहे। इसलिए आवश्यकता तकनीक से युद्ध करने की नहीं, बल्कि तकनीक और मनुष्य के बीच संतुलन स्थापित करने की है।
मोबाइल हमारे हाथ में रहे, मन पर नहीं।
सोशल मीडिया हमारे संवाद का माध्यम बने, संबंधों का विकल्प नहीं।
कृत्रिम बुद्धिमत्ता हमारे कार्यों को सरल बनाए, हमारी सोच को निष्क्रिय नहीं।
विकास हमारी गति बढ़ाए, हमारी संवेदना कम न करे। और सबसे बढ़कर—
हम स्क्रीन की रोशनी में अपने भीतर का दीपक बुझने न दें।
क्योंकि अंततः मनुष्य को उसकी मशीनें नहीं बचाएँगी।
उसे बचाएगा उसका विवेक।
उसे बचाएगा उसका परिवार।
उसे बचाएगा उसका साहित्य।
उसे बचाएगी उसकी प्रकृति से जुड़ी स्मृति।
उसे बचाएगी उसकी करुणा। और सबसे अधिक—
उसे बचाएगा उसका मनुष्य बने रहने का साहस।
आज आवश्यकता है कि हम कुछ क्षण रुकें, मोबाइल की स्क्रीन बंद करें और अपने आसपास देखें।
शायद कोई माँ हमारी प्रतीक्षा कर रही हो।
शायद कोई बच्चा हमारी गोद चाहता हो।
शायद कोई पिता दो शब्द सुनना चाहता हो।
शायद कोई मित्र अपने मन का बोझ बाँटना चाहता हो।

शायद प्रकृति हमें पुकार रही हो।
और शायद सबसे अंत में— हम स्वयं अपने भीतर से हमें पुकार रहे हों।
उस पुकार को सुन लेना ही इस डिजिटल युग में हमारी सबसे बड़ी मानवीय उपलब्धि होगी।

क्योंकि तकनीक भविष्य बना सकती है,
पर भविष्य को मानवीय बनाए रखना—हमारी जिम्मेदारी है।

- नीलचित्रा व्यास

लेखक परिचय

नाम – नीलचित्रा व्यास (चित्रलेखा व्यास) कानोड़,
उदयपुर (राजस्थान)
लेखिक

अन्तरा शब्दशक्ति
प्रकाशन

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

कलम की शक्ति, समाज की दिशा

सम्मान-पत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि

आ........**नीलचित्रा व्यास**........जी

ने हिन्दी पखवाड़े के अवसर पर आयोजित "**एक लेख प्रतियोगिता**" में उत्साहपूर्वक सहभागिता करते हुए **समसामयिक विषय पर अपने विचारों को** प्रभावी एवं सार्थक ढंग से अभिव्यक्त किया।
उनकी साहित्यिक **अभिव्यक्ति** एवं रचनात्मक सहभागिता की सराहना करते हुए **अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन** की ओर से यह **सम्मान-पत्र** सादर प्रदान किया जाता है।

आपकी सृजनशीलता एवं साहित्यिक यात्रा के उज्ज्वल भविष्य की हार्दिक शुभकामनाएँ।

हिन्दी विचारों को विस्तार देती है... समाज को जोड़ती है...

हिंदी
हमारी पहचान...
हमारी शक्ति...

प्रीति सुराना

समकित सुराना

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं संस्था
डॉ. प्रीति समकित सुराना

शब्द से संवेदन तक... लेखन से परिवर्तन तक...